ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-5* August- 2021
Anthology : The Research

उर्वशी में आधुनिक युग बोध

Modern Age Realization in Urvashi

Paper Submission: 15/082021, Date of Acceptance: 25/08/2021, Date of Publication: 26/08/2021

रामेश्वर प्रसाद मीना
असि. प्रोफेसर,
हिन्दी विभाग,
स्वर्गीय राजेश पायलट
राजकीय महाविद्यालय,
बांदीकुई, राजस्थान, भारत

सारांश

रामधारी सिंह दिनकर द्वारा रचित 'उर्वशी' दिनकर की नवीनतम कृति है इसमें पौराणिक काल के पुरूरवा- उर्वशी प्रेमाख्यान द्वारा मानव-मन की प्रमुखता समस्या काम का विश्लेषण किया गया है। कि पुरूरवा जैसे श्रीमान्त लोग किस प्रकार भोग-विलास में लिप्त होने पर भी उससे ऊपर उठने की चेष्ठा में लगे रहते है -

"किन्तु पुरूष क्या कभी मानता है तम के षासन को?
फिर होता संधर्ष तिमिर में दीपक फिर जलते है।"

कवि दिनकर पुरूरवा के माध्यम 'उर्वशी' काव्य में अत्याधुनिक विचारात्मक विश्लेषण को व्यक्त करने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त काव्य में प्राकृतिक आधार पर परा- मनोवैज्ञानिक धारणाओं को व्यक्त किया है।

'Urvashi' by Ramdhari Singh Dinkar is the latest work of Dinkar, in which Pururva of Puranic period - Urvashi Premakhyayan has analyzed the prominence problem of human mind. That how shrimant people like Pururva, even after indulging in indulgence and luxury, try to rise above it -
"But does a man ever believe in the rule of Tama?
Then there is a struggle, the lamp burns again in the darkness.
Through the medium of poet Dinkar Pururva, Urvashi has tried to express the state-of-the-art thought analysis in poetry. Apart from this, the para-psychological concepts have been expressed on a natural basis in poetry.

मुख्य शब्दः उर्वशी, आधुनिक, युग-बोध, नारी, अत्याधुनिक, मानव जीवन, ईश्वर, माया, जीव, संस्कृति, जीवन-दर्शन।

Urvashi, Modern, Age-realization, Woman, Modern, Human life, God, Maya, Jiva, Culture, Philosophy of life.

प्रस्तावना

साहित्य हमेशा समाज के साथ रहता आया है। साहित्य और समाज का अटूट रिश्ता है। इसलिए समाज साहित्य को सृजन-सामग्री देकर सृजन के लिए प्रेरित करता है तो साहित्य भी उसे सृजन सामग्री से समाज को सावचेत व जागृत करता है। हमेशा साहित्य अपनी सृजनात्मक रचनाओं में जब युग का चित्रण करता है तो समाज को सन्मुख रखकर ही रचना करता है। प्रत्येक साहित्यकार की साहित्यिक रचना समकालीन जीवन से किसी न किसी रूप में प्रभावित रहती है। आधुनिक युग बोध के बिना साहित्य में रचना का कोई मूल्य नही होता है। प्राचीन आख्यान को लेकर जब साहित्यकार रचना लिखता हैं तो उसका उद्देश्य कथानक की पुनरावृत्ति करना नहीं, अपितु वर्तमान संदर्भ में नयी दृष्टि देना होता है। उसके माध्यम से साहित्यकार नये युग की ज्वलंत समस्या को उजागर करता है।

अध्ययन का उद्देश्य

दिनकर आधुनिक हिन्दी काव्यधारा के चारण है। उनका सम्पूर्ण काव्य देश के नौजवानों व नई पीढी को बड़ा सम्फूर्तिदायक और प्रेरणा देने वाला है। युग-जीवन की समस्याओं का उनके काव्य में बड़ा सफल-चित्रण हुआ है। अतीत और वर्तमान दोनो ही उनके काव्य में बड़ी सच्चाई के साथ मुखरित हुये है। उर्वशी की रचना में दिनकर का उद्देश्य किसी प्रेम कथा के सामान्य श्रृंगार वर्णन का नही अपितु उर्वशी सनातन नारी और पुरूरवा सनातन पुरूष का प्रतीक है। उर्वशी की भूमिका में दिनकर ने लिखा है - "परिरंम्भ पाष में बधें हुये प्रेमी परस्पर एक दूसरे

का अतिक्रमण करके किसी ऐसे लोक में पहुचँना चाहते है, जो किरणोज्जवल और वायवीय है। अर्थात प्रेम इन्द्रियों के मार्ग से अतीन्द्रय धरातल का स्पर्ष करने लगता है। अतः उर्वशी काव्य का मुख्य उद्देश्य है - नर और नारी के पारस्परिक प्रेमः सम्बन्धांे की नये ढंग से युगानुरूप व्याख्या करना और उर्वशी काव्य में काम और प्रेम का अत्यन्त भव्य रूप में विश्लेषण हुआ है। कवि की इन्ही भावनाओं के पीछे आधुनिक युग बोध जुड़ा हुआ है।"

विषय विस्तार

रामधारी सिंह दिनकर द्वारा रचित 'उर्वशी' भी इसी प्रकार की आधुनिक युग बोध की रचना है। उर्वशी दिनकर की नवीनतम कृति है इसमें पौराणिक काल के पुरूरवा-उर्वशी प्रेमाख्यान द्वारा मानव-मन की प्रमुखतम समस्या काम का विश्लेषण किया गया है। उर्वशी में कवि ने दिखाया है कि पुरूरवा जैसे श्रीमन्त लोग किस प्रकार भोग-विलास में लिप्त होने पर भी उससे ऊपर उठने की चेष्ठा में लगे रहते है-

"किन्तु पुरूष क्या कभी मानता है तम के षासन को?
फिर होता संघर्ष, तिमिर में दीपक फिर जलते है।"

कवि दिनकर पुरूरवा के माध्यम 'उर्वशी' काव्य में अत्याधुनिक विचारात्मक विश्लेषण को व्यक्त करने का प्रयास किया है। इसके अतिरिक्त काव्य में प्राकृतिक आधार पर परा-मनोवैज्ञानिक धारणाओं को व्यक्त किया है-

"इस व्यथा को झेलता/आकाश की निरूसीमता में,
धूमता फिरता विकल, विभ्रान्त पर कुछ भी ने पाता।
प्रष्न जो करता, गगन की षून्यता में गॅूजकर सब ओर।
मेरे ही श्रवण में लौट आता।"

ग ग ग

प्रकटी जब उर्वशी चाँदनी में द्रुम की छाया से ,
लगा, सर्प के मुख से जैसे मणि बाहर निकली हो,
याकि स्वयं चाँदनी स्वर्ण प्रतिमा में आन ढली हो,
उतरी हो धर देह स्वप्न की विभा प्रमद उपवन की,
उदित हुई हो याकि समन्वित नारी श्री त्रिभुवन की।

हमने इस धरा पर विकसित होकर पशु-जीवन का त्याग किया है और मनुष्य बने है। आधुनिक युग के मनोविष्लेषक यही कहते है। मनुष्य होकर भी हमारी पाषविक प्रेरणाये परिवर्तित नही हुई। वे हमारे अन्तर्गत में विद्यमान है और मौका पाकर यदा-कदा प्रकट हो जाती है। डार्विन और फ्रायड़ के इन विचारो के संदर्भ में उर्वशी के पुरूरवा के हृदय का द्वन्द्व स्पष्ट प्रतीत होता है। इसी सन्दर्भ मंे सनातन नर और नारी के काम और अध्यात्म का द्वन्द्व भी उभरा है। उर्वशी का कथ्य जीवन के प्रति संतुलित दृष्टि को स्पष्ट करता है इसी को समझने की आवष्यकता है।

उर्वशी में कवि दिनकर ने अप्सराओं के माध्यम से आधुनिक मानव की प्रवृत्ति को चुनौती दी है। जहाँ सामंतयुगीन धारणाओं के विरूद्ध आधुनिक मान्यता यह है कि मनुष्य की कामाषक्ति इतनी प्रबल हो गई कि मनुष्य विवाह के उपरान्त भी एक प्रेयसी की कामना करता है किन्तु आज की नारी जाग्रत है और पष्चिम देषों की जैसी नारी स्वातन्त्रता का भाव उसमें आ गया है।

"पुत्रवती होगी, शिशु को गोदी में हलरायेगी
मदिर तान को छोड़, सांझ से ही लोरी गायेगी।"

उर्वशी काव्य में रम्भा एकदम चुटीला व्यग्यं करती है जो स्त्री की परवशता को रेखांकित करता है। दूसरी और पुरूष भी है जिसका भाव स्वभाव अलग मांग करता है वह नित्य नयी सुन्दरियों पर रीझता रहता है।

"एक घाट पर किस राजा का रहता बंधा प्रणय है,
नया बोध श्रीमन्त प्रेम का करते ही रहते है,

नित्य नयी सुन्दरताओं पर मरते ही रहते है।"

यहाँ दिनकर ने उर्वशी के द्वारा अप्सरा चित्रलेखा के माध्यम से सामन्ती-विचारधारा का यहाँ प्रबल प्रयोग है, यहाँ दिनकर का युग बोध किसी भी स्थिति में गति-शुन्य नहीं होता बल्कि वह इससे भी आगे की स्थितियों का भी विवेचन करता है और ऐन्द्रिय कल्पना, लोक और सौन्दर्य बोध को पार कर के विश्व मोहिनी के स्तर तक उठ जाता है।

"नहीं, उर्वशी नारी नही, आभा है निखिल भुवन की
रूप नहीं निष्कलुष कल्पना है सृष्टा के मन की।"

आधुनिक काल की गृहिणीयो की स्थिति भी उतनी ही दयनीय है जितनी सामन्त युग की नारी की थी। पहले लोगों की अनेक पत्नियाँ होती थी किन्तु आधुनिक साहित्यकार कवि तथा सम्पन्न व्यक्ति भी चाहते है कि उनकी पत्नि के अतिरिक्त कोई प्रेयसी हो। भक्तिकाल के बाद नवजागरण काल में जनमानस की भावना ने साहित्य की रूचि में परिवर्तन किया और उस परिवर्तन काल मे नारी के प्रति दृष्टिकोण भी बदला गया। हजारी प्रसाद द्विवेद्वी ने बाणभट्ट की आत्मकथा में लिखा है कि "स्त्री अपना कोई उपकार नहीं कर सकती है और ना पुरूष का अपकार कर सकती है। स्त्री प्रकृति है उसकी सफलता पुरूष को बॉधने में है किन्तु उसकी सार्थकता पुरूष को मुक्ति देने मंे है।" एक अन्य स्थान पर हजारी प्रसादी द्विवेद्वी ने "बाणभट्ट की आत्मकथा" में लिखा है "जब तक तुम पुरूष और स्त्री का भेद नहीं भूल जाते, जब तक तुम अधूरे हो, अपूर्ण हो, आसक्त हो, तुम और मैं का भेद तब तक तुमसे निरन्तर चिपटा रहेगा, अगर नैरात्म्य भावना की प्रवृति तुमसे होती, तो शक्ति के बिना भी साधना चल सकती ।"

दिनकर का पुरूखा भी द्वन्द्व में है, क्योंकि द्वन्द्व में रहना मनुष्य का स्वभाव है। मनुष्य सुख की कामना भी करता है और उससे आगे निकलने का प्रयास भी। उर्वशी में युग बोध के संदर्भ में नारी स्वरूप चित्रण में यह प्रकृति स्पष्ट परिलक्षित होती है। आज का युग हिन्दी साहित्य के उन युगो से भिन्न है जब नारी को केवल काम की पुतलिका और ब्राहय सौंदर्य की निधि माना जाता था। जब कवियों की दृष्टि नारी के केवल शरीर तक ही पहुँच पाती थी, उसकी आत्मा में पैठने की कवियों में शक्ति नहीं थी आज का कवि नारी की आत्मा में पेठकर उसके वास्तिविक स्वरूप का विश्लेषण और विवेचन करता है आज के समाज में नारी का महत्त्वपूर्ण स्थान निर्विवाद रूप से स्वीकृत किया जा चुका है। नारी का यह रूप विषेष है जिसका संधान तभी हो सकता है जब मनुष्य उसके शरीर के सुन्दर आवरण को भेदकर उसकी आत्मा में प्रवेष करें। उर्वशी काव्य मंे दिनकर ने नारी आत्मा को भेदकर उसके वास्तविक रूप का संधान किया है। उर्वशी में कवि ने नारी का उदात्त भाव प्रकट किया है। उसका सम्मान किया है और सम्मान होना भी चाहिए क्योंकि नारी सृष्टि की खूबसूरत सृजन है जो स्वयं तपकर सृष्टि का सृजन करती है। उर्वशी में नारी स्वरूप को देखे तो वह शक्ति है जिससे मनुष्य को परम रूप मिलता है।

"नारी ही वह महासेतु जिस पर अदृष्य से चलकर
नये मनुज नव प्राण दृष्यजग में आते रहते है।
नारी ही वह कोष्ट, देव, दानव, मनुष्य से छिपकर,
महामून्य चुपचाप, जहाँ आकार ग्रहण करता है।"

उर्वशी काव्य में कवि दिनकर ने नारी स्वरूप को जो स्थान दिया है उसको सृष्टि की रचना और पुरूष का भाग्य निर्धारित करने वाली, पुरूष का यष पूरा करने वाली सृष्टा बताया है।

"सच पूछा तो, प्रज्ञा सृष्टि में क्या है भाग पुरूष का?
यह तो नारी ही है जो, सब पूर्ण करती है!
सत्व भार सहती असंग, सन्रति असंग जानती है,
और वहीं षिषु को ले जाती मन के उच्च निलय में,
जहाँ निरापद, सुखद कक्ष है शैषव के झुले का।"

इसके अतिरिक्त जब मानव उन्नति की ओर बढ़ता है और उस उन्नति में नहीं फँस जाता है तो नारी ही वह शक्ति है जो अपनी शक्ति के बल पर उसे पुनः गति प्रदान करती है। नारी त्याग की मूर्ति होती है वह उसके बदले पुरूष से किसी प्रकार का लाभ या पारितोषित नहीं चाहती है।

औषीनरी समझ नहीं पाती कि उसके पति तो उसके अनुकूल रहते थे, फिर अचानक ही किसी अन्य नारी ने उन्हे कैसे वष में कर लिया-

"पगली! कौन व्यथा है, जिसको नारी नहीं सहेजी?
कहती जा सब कथा, अग्नि की रेखा को जलने दे?
जलती है यदि हृदय, अभागिन का उसको जलने दे।
सानुकूलता कितनी थी उस दिन स्वामी के स्वर में,
समझ नहीं पाती, कैसे वे बदले गये क्षणभर में,
ऐसी भी मोहिनी कौन सी परियां कर सकती है
पुरूषो की धीरता एक पल में यो हर सकती है।"

यह जानकर कि पति ने पे्रयसी के साथ जीवन भर रहने का निष्चय कर लिया है, बेचारी पत्नी यही सोचने को विवष हो जाती है कि इससे अच्छा तो यह है कि मृत्यु का वरण कर लिया जाए-

"आजीवन वे साथ रहेगे तो अब क्या करना है?
जीते-जी यह मरण झेलने से अच्छा मरना है।"

उर्वशी काव्य की औषोनरी अर्थात पत्नी की मनोव्यथा अन्ततः इन शब्दों में साकार हो उठती है-

"कितना विलक्षण न्याय है।
कोई न पास उपाय है।
अवलम्ब है सबको मगर नारी बहुत असहाय है।
दुःख दर्द जतलाओं नहीं
मन की व्यथा गाओ नहीं
नारी! उठे जो हुक मन में, जीभ पर लाओं नहीं।"

भारतीय नारी अपने दुःख दर्द को कभी उजागर नहीं होने देती है वह मन की व्यथा मन में रखती हुई सहती रहती है। नारियों के हृदय में परम्परागत संस्कार इतने दृढ़ होते है कि पत्नी ऐसे विष्वासघाती पति की भी मंगल कामना करती है।

"तब भी मरूत अनुकूल हो,
मुझको मिले, जो शूल हो,
प्रियतम जहाँ मिले, बिछे सर्वत्र पथ में फूल हो।"

आज के युग में नारी ही नहीं अपितु पुरूष भी बंधन मुक्त होना चाहता है। दिनकर ने उर्वशी महाकाव्य के पुरूरवा की सारी छटपटाहट इसी भाव को लेकर है। पुरूष कभी-कभी प्रणय के बंधन भी स्वीकार नहीं करना चाहता। पुरूरवा समयातीत होता तो यह नहीं चाहता किन्तु देवत्व प्राप्त कर अमरत्व प्राप्त करना भी नहीं चाहता, वह मत्र्य रहकर हीं अमत्र्य बनना चाहता है वह अपने मानस-सरोवर की कीचड़ मंे कमल प्राप्त करने का भी इच्छुक है-

"हम केवल डूबते नहीं, ऊपर भी उतराते है,
पुंडरीक के सदृष मृंत्ति-जल ही जिसका जीवन है।
पर, तब भी रहता अलिप्त जो सलिल और कर्दम से।"

दिनकर का अपने काव्य 'उर्वशी' में जो उद्देश्य है उसके पीछे आधुनिक युग-बोध के अनेकों स्तर जुड़े हुए है। इनमें उनका अरविन्द का दर्शन भी है और डार्विन का विकासवाद भी है गीता की निष्काम काम-भावना भी है? फ्रायड का अवचेतन काम भी एंवम् गाँधी की अंहिसा भी है।

मानव-मन की समस्त उदात्त भावनाओं और प्रक्रियाओं का एक लक्ष्य होता है- सुखों का वरण और दुःखों से निवृत्ति। मनुष्य के जीवन भर यही प्रयास और समस्त कार्य-कलाप इसी लक्ष्य के आस-पास घूमते रहते है। मनुष्य की यही मानव-मन प्रवृत्ति दर्शन-षास्त्र और काव्य शास्त्र में दिखाई या परिलक्षित होती है। यद्यपि साहित्य में दर्शन शास्त्र और काव्य शास्त्र एक दूसरे के विरोधी प्रतीत होते है, क्योंकि दर्शन शास्त्र में मस्तिष्क के गहन चिन्तन का आधिक्य होता है और काव्य शास्त्र में हृदय की गहरी भावुकता की प्रधानता होती है। इसलिए इन चिंतन

और भावुकता को काव्य मंे विरोधी बताया गया है। इसके बावजूद यह दोनांे शास्त्र विरोधी न होकर एक-दूसरे के पूरक है। दर्शन शास्त्र और काव्य शास्त्र का परस्पर अटूट सम्बंध स्थापित करते हुए डॉ. विषम्बरनाथ उपाध्याय लिखते है-

"कवि दार्शनिक को अपना पथ प्रदर्षक अनजाने में ही मानता आया है, आज तक का इतिहास कम से कम यही है, जो कवि स्वयं दार्शनिक धाराओं के लिए उनके प्रवर्तक या प्रचारक किसी बड़े दार्शनिक पर निर्भर रहे है। यथा श्री शंकराचार्य पर। अतः कविता और दर्शन का अटूट सम्बंध चला आ रहा है।" अतः समीक्षकांे के आधार पर साहित्य में जो दर्शन समीक्षा है उसके आधार पर काव्य शास्त्र और दर्शन शास्त्र को अलग नहीं किया जा सकता है। विद्वान कवियों की रचनाये स्वतः ही काव्यमय दर्शन होती है। दिनकर के काव्य 'उर्वशी' में दर्शन पर्याप्त और स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उर्वशी काव्य में ईश्वर को सर्वषाक्तिमान और सृष्टि का सृष्टा माना गया है। ईश्वर ही मनुष्य के जीवन कार्यों का नियन्त्रण करता है। मनुष्य कर्ता नहीं, वरन इस परम सत्ता के इंगित पर कार्य करने वाला है इसी भाव को 'उर्वशी' में देखा जा सकता है-

"यह सब उनकी कृपा, सृष्टि जिनकी निगूढ़ रचना है।
झूके हुए हम धनुषमात्र है, तनी हुई ज्या पर से।
किसी और की इच्छाओं के बाण चला करते है।"

ईश्वर द्वारा रचित सम्पूर्ण सृष्टि का जितना भी प्रहार है, सब पर उसी परम ब्रह्मा की सत्ता है। इस संसार में न कोई पुरूष और न कोई नारी, बल्कि एक ही सत्ता के प्रतिमान है-

"वह निरभ्र आकाष, जहाँ की निर्विकल्प सुषमा में,
न तो पुरूष मैं पुरूष, न तुम नारी केवल नारी हो;
दोनो है प्रतिमान किसी एक ही मूल सत्ता के,
देह-बुद्धि से परे नहीं जो नर अथवा नारी है।"

आकाष, पाताल, धरा सम्पूर्ण वायुमण्डल में वह ईश्वर व्यापक है। प्रकृति के कण-कण में ईश्वर रमा हुआ है। अतः उर्वशी में भी कवि ने परम ब्रह्म के इसी रूप का वर्णन किया है-

"ईश्वरीय जग भिन्न है इस गोचर जगती से,
इसी अपावन में अदृष्य वह पावन सत्ता है।

परमात्मा और प्रकृति कभी भी विरोधी या विपरीत सत्ता नहीं रही। प्रकृति ईश्वर प्राप्ति में विरोधी नहीं बल्कि सहायक रही है। प्रकृति ने ईश्वर को प्राप्त करने मंे हमेषा मार्ग प्रषस्त किया है।

भ्रान्ति नहीं, अनुभूति, जिसे ईश्वर हम सब कहते है,
शत्रु, प्रकृति का वहीं, न उसका प्रतियोगी प्रतिबल है।
किसने कहा तुम्हें, परमेष्वर और प्रकृति, ये दोनों
साथ वही रहते; जिसको भी ईश्वर तक जाना है,
उसे तोड़ लेने होगे सारे सम्बंध प्रकृति से;
और प्रकृति के रस में जिसका अन्तर रमा हुआ है
उसे और जो मिले, किन्तु परमेश्वर नहीं मिलेगा?

मूल प्रकृति में तीनों गुणों की अवस्थिति होती है इसलिए इसे तीनों गुणों की साम्यवस्था माना गया है अर्थात अव्यक्त अवस्था में तीनों सत्व सत्व रूप में, रजस रजोरूप में तथा तमस रजोरूप में परिणत होते है। अतः इसमें कोई वैषम्य उत्पन्न नहीं होता। भारतीय दर्शन में देह को मृत्ति माना गया है अर्थात यह नित्य नहीं है। उर्वशी ने भी देह को मृत्ति माना है।

"देह मृत्ति, दैहिक प्रकाष की किरणे मृत्ति नहीं हैं
अधर नष्ट होते मिटती झंकार नहीं चुम्बन की;
यह अरूप आमा-तरंग अर्पित उसके चरणों पर
निराकार जो जाग रहा है सारे आकारों में।

कवि दिनकर ने अपने काव्य 'उर्वशी' में जीवन को कार्य-कारण की लडी माना है जिसमें निरन्तर एक के बाद एक संघर्ष आते रहते है-

"अर्थ खोजते हो जीवन का? लडी कार्य-कारण की
बहुत दूर तक बिछी हुई है पीछे अंधियाले में।
चलों जहाँ तक भी अतीत में चरण-चरण पर,
मात्र प्रतीक्षा-निरत प्रष्न मग में मिलते जायेगे।"

'उर्वशी' में काल दर्शन की बात करे तो 'काल की गति निरन्तर प्रगतिशील होती है वह बिना किसी की प्रतीक्षा किये हुए और बिना किसी रूकावट के अबाध गति से चलता रहता है, यह काल अनन्त है इसकी कोई सीमा नहीं। समस्त ब्रह्माण्ड इस काल के नियन्त्रण में होता है-

"सिन्धु विन्ध्य हिमवान खड़े है दिगायाम में जैसे
एक साथ त्यांे काल देवता के महान प्रांगण में
भूत भविष्यत, वर्तमान, सब साथ-साथ ठहरते है,
बाते करते हुए परस्पर गिरा-मुक्त भाषा में।"

अतः अपने काव्य सौंदर्य की गरिमा की भांति ही उर्वशी का दार्शनिक पक्ष भी आधुनिक युग बोध के अनुरूप है। काव्यमयी शैली के माध्यम से कवि दिनकर ने दर्शन भी गूढ़ सूक्ष्मताओं को बहुत ही सरस बना दिया है। उर्वशी काव्य में नीत्से का सुपरमनः, भारती ऋषि की आत्म-चेतना भी है कीट्स का रोमांस भी है। इन सिद्धान्तों, इन वादों और विचारों को लेकर इस आधुनिक कवि ने आधुनिक युग का आधार लेकर इस काव्य का सृजन किया है। अस्तित्व बोध को उर्वशी में कवि ने कुछ इस तरह बया किया है -

"अनासक्ति तुम कहो, किन्तु, इस द्विधाग्रस्त मानव की
झाँकी मुझमें देख मुझे जाने क्यों भय लगता है।"

इस प्रकार उर्वशी काव्य में आधुनिक युग बोध के चित्रण देखे जा सकते है इसके अतिरिक्त रवीन्दं्रमय पेन्थीइज्म को भी उर्वशी काव्य में देखा जा सकता है-

धूमयोनि ही नहीं, ठोस यह पर्वत भी छाया है,
यह भी कभी शून्य अम्बर था, और अचेत अभी भी।
नये नये आकारों में क्षण-क्षण यह समा रहा है,
स्यात कभी मिल ही जाये क्या पता अनंत गगन में।"

उर्वशी का यह दृढ़ मत है कि प्रकृति में किसी प्रकार का द्वैत नहीं है। जब तक हम उसे और परमेष्वर को अलग-अलग देखते है, तभी तक यह संसार हमें माया लगता है। यदि हम अच्छे बूरे भावों से तटस्थ हो जाऐं, तो भेद का अस्तित्व नहीं रह जाता और न शंका के लिए कोई जगह रह जाती है। दिनकर ने कहा है कि भेद-दृष्टि से शरीर और मन की एकता का भंजन होता है। वास्तव में मन शरीर का ही एक अंष है।

"मन की कृति अद्वैत, प्रकृति में, सचमुच, द्वैत नहीं है।
जब तक प्रकृति विभक्त पड़ी है श्वेत-ष्याम खंड़ों में,
विश्व तभी तक माया का मिथ्या प्रवाह लगता है।
किन्तु शुभाषुभ भावों से मन के तटस्थ होते ही,
न तो दीखता भेद, न कोई शंका ही रहती है।"

इस संसार को माया नहीं मानने में सबसे बड़ी बाधा यह है कि क्षण-क्षण परिवर्तनषील है औरविनाश को प्राप्त होता जा रहा है। उर्वशी में कवि ने इस परिवर्तन कोविनाश न कहकर इसको गति देने वाला बताया है।

"जिसे खोजता फिरता है तू, वह अरूप, अनिकेतन
किसी व्योम पर कही देह धर बैठा नहीं मिलेगा।
वह तो स्वयं रहा वह अपनी ही लीला धारा में,
कर्दम कही, कहीं पंकज बन, कही स्वच्छ जटा बनकर।

निष्कर्ष

इस प्रकार दिनकर ने इस दर्शन का समर्थन करते हुए प्रकृति में निवृत्ति और निवृत्ति में प्रवृत्ति का सुविचार भारतीय दर्शन के अनुरूप किया है। 'उर्वशी' दिनकर-काव्य का सर्वोच्च शिखर तो है ही, वह समग्र आधुनिक हिन्दी कविता का एक अत्युच्च शिखर है। दिनकर पहले से ही हिन्दी के श्रेष्ठ कवि के रूप में मान्य थे। उनकी उर्वशी आधुनिक युग बोध की श्रेष्ठ रचना है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *उर्वशी- रामधारी सिंह दिनकर*
2. *छायावाद- नामवर सिंह*
3. *दिनकर और उनकी उर्वशी- प्रो. देषराज सिंह*
4. *उर्वशीः मूल्यांकन की समस्या- खगेन्द्र ठाकुर (आलोचना पत्रिका लेख)*
5. *उर्वशीः समीक्षा एवं व्याख्या- डॉ. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी*
6. *बाणभट्ट की आत्मकथा- हजारी प्रसार द्विवेदी*
7. *प्रकृति और मानव के संबंध- महादेवी वर्मा*
8. *अलोचना त्रैमासिक- सं. नामवर सिंह*